RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-09
September-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI: https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i09.054

जोतिराव फूले का सामाजिक परिवर्तन की संकल्पना : एक ऐतिहासिक समीक्षा

डॉ० सुनील राम

पूर्व शोधार्थी, इतिहास विभाग महाराजा कॉलेज, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय आरा (भोजपुर), बिहार – 802301

आधुनिक भारत में सामाजिक क्रान्ति का बीज बोने का ऐतिहासिक कार्य जोतीराव फूले ने किया है। जोतिराव फूले के विचार तथा कार्य केवल सामाजिक सुधार तक ही सीमित नहीं थे। उनके विचार तथा कार्य भारतीय समाज की दृष्टि से भी क्रान्तिकारी थे। फूले ने वर्ण तथा जाति–व्यवस्था, हिन्दू धर्मग्रन्थ, ब्राह्मणशाही, शूद्र–अतिशूद्र, नारी, किसान, शिक्षा जैसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयों के संबंध में अपने मौलिक विचार प्रस्तुत किए और प्रत्यक्ष रूप से कार्य भी किया। उनके विचार तथा कार्य केवल सुधार के लिए ही नहीं थे। भारत की समाज–व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन करनेवाले उनके क्रान्तिकारी विचार तथा कार्य थे। इसीलिए फूले को 'आधुनिक भारत की सामाजिक क्रान्ति का अग्रदूत' कहा जाता है। सही अर्थों में फूले ने आधुनिक युग में पहली बार सामाजिक क्रान्ति का विचार भारतीय समाज के समक्ष प्रस्तुत किया।

फूले ने भारतीय समाज का चिकित्सकीय गहन अध्ययन किया था। समाज के मूलभूत प्रश्न कौन–कौन से हैं, इसपर उन्होंने गंभीर विचार किया। तब उन्हें पता चला कि शूद्र, अतिशूद्र, किसान और नारी इन सभी की कुछ समान मूलभूत समस्याएँ है। लेकिन आश्चर्यजनक बात यह है कि इन लोगों को अपनी समस्याओं की आभास ही नहीं था। फूले को यह महसूस हुआ कि देश के बहुसंख्यक लोगों की समस्याएँ सामाजिक व्यवस्था से जुड़ी हुई है। सामाजिक व्यवस्था में से ही विविध समस्याएँ पैदा हुई हैं। लेकिन यहाँ कि समाज–व्यवस्था का आधार मानव या समान नहीं, बल्कि ब्राह्मण धर्म और इसके धर्मग्रंथ हैं। ब्राह्मणी धर्मग्रंथ, ब्राह्मणशाही, जातिवाद ये भारतीय समाज–व्यवस्था का आधार है। इस आधार के मूलतत्त्व पर समाज–व्यवस्था का निर्माण किया गया। इसीलिए बहुसंख्यक लोगों की मूलभूत समस्या नष्ट करनी है और मानवतावादी मूल्यों पर आधारित नए समाज की नींव रखनी है, तो जिस पुरानी नींव पर यह समाज–व्यवस्था खड़ी है, उस नींव को ही उखाड़कर फेकना होगा। यह अत्यन्त मौलिक विचार जोतिराव फूले ने रखा। इसलिए उन्होंने ब्राह्मण के धर्मग्रंथ, वर्ण, जाति–व्यवस्था, सामाजिक गुलामी जैसी बातों पर प्रहार किया। लेकिन फूले के क्रान्तिकारी विचारों को तत्कालीन समाज हजम नहीं कर पाया। क्योंकि अज्ञान तथा झूठे धर्म का प्रभाव इन दो बातो के कारण ही भारतीय समाज का विवेक नष्ट हो गया था।

जोतिराव फूले ने विविध विषयों पर जो विचार प्रस्तुत किए, उन विचारों का मूल उद्देश्य समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाना ही था। उनको समतामूलक और शोषणरहित समाज की स्थापना करनी थी, जिसमें सभ मानव सुखी हो। ये सभी बातें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसलिए उनके साजिक परिवर्तन संबंधी संकल्पना का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना महत्वपूर्ण है।

(क) समाज सुधार, सामाजिक सुधार तथा सामाजिक परिवर्तन :–

आधुनिक भारत में सामाजिक सुधारों का विचार अंग्रेजों के राज में ही सामने आया। अंग्रेजी काल में भारत के सामाजिक जीवन में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लानेवाली दो बाह्य शक्तियाँ अर्थात् विज्ञान तथा ईसाई धर्म है। ऐसा प्रा.गं.बा. सरदार ने प्रतिपादित किया है। विज्ञान तथा इसके साथ ही अंग्रेजों द्वारा बनाए गए कानूनों के कारण सामाजिक जीवन में कई परिवर्तन आए, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता। विज्ञाननिष्ठा की अपेक्षा सार्वजनिक कार्यकर्त्ता के मन में ईसाईयों के मानवतावाद का विशेष प्रभाव पड़ा था। उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्ध में पाश्चात्य देशों से प्रोटेस्टन्ट सम्प्रदाय के अनेक धर्मोपदेशक भारत आए और उन्होंने अलग–अलग स्थानों पर प्रचार केन्द्र की स्थापना की।

प्रोटेस्टन्ट सम्प्रदाय के धर्मोपदेशकों के आने के पहले सदियों पूर्व कैथोलिक सम्प्राय के धर्मोपदेशक भारत आए थे। उन्होंने यहाँ ईसाई धर्म का प्रसार भी किया था लेकिन कैथॉलिक की अपेक्षा प्रोटेस्टन्ट प्रगतिशील विचारों के थे। उसकी कार्यपद्धति से सुजानता और सभ्यता थी। व्यक्ति के अंतः प्रेरणा की पवित्रता तथा उसकी निर्णय स्वतंत्रता की बातों को वे मानते थे। इसीलिए उन्होंने अपने प्रचारतंत्र में शिक्षा, सेवा तथा धर्मातत्वनिरूपण पर विशेष जोर दिया। विचार परिवर्तन पर उनका विश्वास था। अंग्रेजी राज में शिक्षा को महत्व दिया गया था। देश के उच्च जाति के लोगों ने अंग्रेजी शिक्षा का खूब लाभ लिया। देश में उच्च जाति के शिक्षित लोगों का एक वर्ग निर्माण हुआ था। अंग्रेजी काल में शिक्षा के प्रसार के समान ही धर्मजिज्ञासा तथा यह दो प्रेरणाएं शिक्षित लोगों को मिली। धर्मजिज्ञासा तथा समाज सुधार इन दोनों प्रेरणा से एक दूसरे के साथ सम्बन्धित थीं। क्योंकि हमारे देश

RRIJM 2015, All Rights Reserved

का प्रत्येक सामाजिक प्रश्न धर्म से जुड़ा हुआ था। आज भी देश के कई प्रश्न धर्म से ही सम्बन्धित है।

प्रोटेस्टनट धर्मोपदेशक लोगों के बीच जाकर उनकी स्वास्थ्य–सेवा, शिक्षा का प्रसार तथा अन्य कार्य बड़ी निष्ठा से करने लगें। तब मानव–मानव में भेद करनेवाली जाति–व्यवस्था, छूआ–छूत आदि बातों का उन्हें पता चला। सामाजिक जीवन में धर्म के नाम पर पैदा हुई अनेक अनिष्ठ रूढ़ी परम्परा उन्हें दिखलाई दी। प्रोटेस्टन्ट लोग मूलरूप से सुधारवादी थे। क्योंकि परम्परागत ईसाई धर्म में सुधार करने के विचार से ही प्रोटेस्टन्ट सम्प्रदाय का उदय हुआ था। इसीलिए भारत में आए धर्मोपदेशकों ने भारत के अनेक सामाजिक प्रश्नों को उजागर किया था। उन्होंने नारी–शिक्षा, बालविवाह, पुनर्विवाह, छुआछुत आदि सामाजिक प्रश्नों के संदर्भ में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। इस प्रकार ईसाई धर्मोपदेशक सुधारवादी कार्य कर रहे थे। इनके इस कार्य के कारण यहाँ के कुछ शिक्षित लोग विचार करने लगे। अपनी धार्मिक और सामाजिक समस्याओं के बारे में चिन्तन शुरू हुआ। यदि अपने धर्म की अनिष्ठ रूढ़ी–परम्पराओं का विरोध नहीं किया, तो ईसाई धर्मोपदेशकों का वर्चस्व बढ़ जाएगा। इसलिए उच्च जाति के लोगों ने हिन्दू धर्म में निचले वर्ग को जोड़कर रखने के लिए धर्म की चिकित्सा करके सुधार लाने के विषय में आपस में ही विचार विनिमय शुरू कर दिया।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भारत में सामाजिक सुधारों का जन्म इसीलिए नहीं हुआ कि समाज में परिवर्तन लाकर सभी को सम्मान जीना चाहिए अपितु ईसाई धर्मोपदेशकों के सुधारों का डर उच्च जाति के लोगों को लग रहा था। इन सुधारों के कारण लोग ईसाई धर्म की ओर आकर्षित हो रहे थे, इसीलिए हिन्दू धर्म को टिकाए रखने के लिए और ईसाई धर्मोपदेशकों पर मात देने के लिए थोड़े बहुत सामाजिक सुधार करने की कोशिश कुछ लोगों ने की। उसी में से राजा राममोहन राय, लोकहितवादी न्यायमूर्ति रानेडे, गोपाल गणेश आगरकर आदि अनेक समाज सुधारक सामने आए।

यहाँ के शिक्षितों ने अपने धर्म की चिकित्सा करना शुरू किया। धर्म का युद्ध स्वरूप कौन सा है? धर्म के सिद्धान्त शाश्वत हैं या परिवर्तनशील? धर्मशास्त्र के विविध निषेध त्रिकालबाधित या कालसापेक्ष है? धर्म तथ नीति का क्या संबंध है? समय के अनुसार आचार–विचार में परिवर्तन लाना हो तो कौन सा प्रमाण मानना श्रेष्ठ होगा? सामाजिक सुधार का साध्य–साधन विवेक कैसे किया जाए? आदि सवाल हमारे बीच के नए चिंतनशील सुशिक्षितों के समाने खड़े थे। इन सभी सवालों के बारे में वे सोचने लगे, उससे निम्नलिखित विचार प्रवाह यहाँ अस्तित्व में आए, ऐसा प्रा.गं.बां. सरदार ने लिखा है।

1. स्मृति पुराण के अनुसार हिन्दू धर्म तथा उसकी समाज–व्यवस्था ईश्वरकृत है। यह सर्वश्रेष्ठ और अपरिवर्तनीय है। इनको बदलने का विचार पाखंड है। हमारे सनातन वैदिक धर्म की रक्षा ही हमारा कर्त्तव्य है। ऐसा मानने और उस दृष्टि से ईसाई धर्मोपदेशकों के विचारों का खन्डन करनेवाले मोरभट, दांडेकर, कृष्णशास्त्र साठे का परंपराभिमानी स्थितिवादी विचार प्रवाह।
2. सामान्य लोगों को बुद्धिभेद नहीं होना चाहिए, इसीलिए पुरानी परंपरा पर आचानक आघात न कर के संदर्भ में बालशास्त्री जोभकर तथा गंगाधरशास्त्री फडके का लेकिन प्रगमनशील विचार प्रवाह।
3. किसी एक धर्म का निरपवाद प्रमाण न मानकर अलग–अलग धर्मग्रन्थों के सर्वसामान्य उदात्त तत्त्वों के आधार पर धर्म सुधार करनेवाले दादोबा पांढुदरंग तथा रापचन्द्र बालकृष्ण का धर्मनिष्ठ विवेकप्रधान विचार प्रवाह।
4. परमार्थ तथा सामाजिक व्यवहार का क्षेत्र अलग मानकर ईश्वरभक्ति में भावबुद्धि तथा सदाचरण को प्रधानता देनेवाले बौर सामाजिक प्रश्नों का निर्णय करते हुए केवल बुद्धिनिष्ठों की सामाजिक उपयुक्तता की दोहरी कसौटी लगानेवाले लोकहितवादी के धर्मनिरपेक्ष विचार प्रवाह।

इस प्रकार धर्मचिकित्सा करके सामाजिक सुधार करने के संदर्भ में यहाँ के शिक्षित लोगों ने विचार करना प्रारंभ किया। इन सभी विचारप्रवाहों से यह पता चलता है कि, हिन्दूधर्म तथा भारतीय समाज–व्यवस्था में अर्थात् जाति–व्यवस्था में परिवर्तन करने के संदर्भ में विचार प्रस्तुत नहीं किए। केवल सतीप्रथा, बालविवाह, विधवाविवाह इत्यादि अनिष्ट प्रथा परंपरा नष्ट करके समाज में सुधार लाने तथा ईसाई धर्मोपदेशकों के सुधारवादियों को उत्तर देने तक के लिए सीमित उद्देश्य सामाजिक सुधारकों का था, समाज में आमूलचूल परिवर्तन लाने का समाजसुधारकों का उद्देश्य कभी भी नहीं था। भारत के अधिकतर समाज सुधारकों का कार्य यह धन की चौखट तक ही सीमित था। हिन्दू धर्म के वर्ण तथा जाति–व्यवस्था की चौखट तोड़े बिना थोड़ा सुधार करना यही समाज सुधारकों की भूमिका थी। किसी बंगले को ठीक करना ही समाजसुधारकों का उद्देश्य नहीं था। इतना ही नहीं, उस प्रकार का विचार भी उन्होंने नहीं किया था। क्योंकि वे सही अर्थों में समाजसुधारक ही नहीं थे। हिन्दू धर्म तथा समाज की गलत रूढ़ी परम्परा पर अंग्रेजी लोगों के आक्षेप, ईसाई धर्मप्रचारकों के सुधारवादी विचार ताकि कार्यों की प्रत्युत्तर देना ही भारतीय समाज का मुख्य उद्देश्य था।

भारतीय समाजसुधारकों का सामाजिक सुधार के विषय में अत्यन्त संकुचित दृष्टिकोण था। इसीलिए बाबा साहेब डॉ० आंबेडकर ने सामाजिक सुधार के दो अर्थो के बीच का अन्तर स्पष्ट किया। उनके अनुसार, ''हिन्दू परिवार के संदर्भ में सामाजिक सुधार और हिन्दू सामाज के पुनः सुगठन तथा पुनर्रचना संबंधी सामाजिक सुधार में अन्तर करना आवश्यक

RRIJM 2015, All Rights Reserved

है।'' सतीप्रथा, विधवा पुनर्विवाह, बालविवाह आदि पारिवारिक प्रश्नों के संदर्भ में उनके सामाजिक सुधार थे। इन सामाजिक सुधारों के कारण केवल पारिवारिक क्षेत्र में परिवर्तन लाना अपेक्षित था। सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाना उनका उद्देश्य नहीं था, ऐसा भारतीय सामाजिक सुधार के अध्ययन से स्पष्ट होता है।

कांग्रेस पक्ष के प्रारंभिक काल में राजनीतिक सुधारकों तथा सामाजिक सुधारों के दो गुट अस्तित्व में थे। समाज सुधारकों का सुधार पारिवारिक सुधारों तक ही सीमित था। इसके विपरीत राजनीतिक सुधार भारतीय राजनीतिक परिस्थिति परिवर्तन लाने की दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण था। इस विवाद में राजनीतिक सुधारवादियों की जीत हुई और समाज सुधारकों की हार। इसीलिए बाबा साहेब डॉ० आंबेडकर कहते हैं कि, ''उनमें जबरदस्ती का वैधव्य, बालविवाह करना आदि कइ बुरे रीतिरिवाज थे, उन्हें नष्ट करना सुधारकों को अवश्यक लगा। लेकिन हिन्दू समाज में सुधार लाने के लिए वे कभी भी खड़े नहीं हुए थे। केवल पारिवारिक प्रश्नों संबंधी सुधार करने के लिए उन्होंने प्रयास किया। जाति–व्यवस्था तोड़ने के संदर्भ में उन्होंने सुधार नहीं किया था। तत्कालीन सामाजिक सुधारकों ने यह प्रश्न कभी नहीं उठाया था। जिसके कारण सामाजिक सुधार का पक्ष परास्त हो गया।''

संक्षेप में, अंग्रेजी राज में होने वाले शिक्षा का प्रसार, नए विचारों का आभास और ईसाई धर्मोपदेशकों का प्रसार इनके कारण हिन्दू धर्म अर्थात् ब्राह्मण धर्म के अस्तित्व का प्रश्न पैदा हो गया था। पश्चिमी शिक्षा प्रणाली से शिक्षित युवकों में निर्माण हुआ, बुद्धिवाद तथा ईसाई धर्मोपदेशकों का मानवतावादी विचार, इसी प्रकार उनकी हिन्दू धर्म के ऊपर से विश्वास कम होने लगा। कॉलेज से शिक्षा प्राप्त युवक नास्तिक बन रहे थे, या वे ईसाई धर्म की ओर झुक रहे थे। शिक्षित युवक हिन्दू धर्म से दूर हो रहे थे। ईसाई धर्म का समान व्यवहार का तत्व कनिष्ठ जाति के लोगों को खूब आकर्षित कर रहा था। जिसके कारण वे ईसाई धर्म की ओर मुड़ रहे थे। परिस्थिति कुछ समय तक यही रही तो हिन्दू धर्म नष्ट हो जाएगा। यह डर उच्च जाति के लोगों को सता रहा था। उनके पारंपरिक वर्ण तथा जाति–व्यवस्था का उनका अस्तित्व धोखे में आ गया। अतः देश में निर्मित हुई सुधारवादी विचारों को शह देने के लिए हिन्दू धर्म के उच्च जाति के लोगों ने सामाजिक सुधार का कार्य हाथ में ले लिया था। कर्मकाण्ड, सतीप्रथा, बालविवाह आदि प्रश्नों के संदर्भ में सुधार लाने की कोशिश उन्होंने प्रारम्भ कर दी थी।

भारतीय सुधारकों के सुधारों का यथार्थ अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि उनके ये सुधार समाज में बुनियाद परिवर्तन लाने के लिए नहीं था। उनका वैसा उद्देश्य भी नहीं था। केवल हिन्दू धर्म पर आया हुआ संकट दूर करने के लिए हिन्दू धर्म बुरा नहीं है, केवल कुछ रूढ़ी–परम्परा खराब हैं, उन्हें नष्ट करना आवश्यक है, ऐसा वे कहने लगे। विषमता पर आधारित जाति–व्यवस्था नष्ट करने, शूद्र तथा अतिशूद्रों को जाग्रत करने, शिक्षा सभी जाति के लोगों को मिलनी चाहिए। स्त्री–पुरुष समानता का प्रसार करना यह उद्देश्य देश के तथाकथित समाज सुधारकों का कभी भी नहीं रहा। क्योंकि अधिकतर समाज सुधारक, उच्च जाति के थे, इसके समाज के गरीब लोगों के प्रश्नों के संदर्भ में उन्होंने कभी भी नहीं सोचा। केवल इतना ही नहीं, उन्होंने गरीबों के सुधार का तीव्र विरोध किया, उनके सुधार केवल पारिवारिक सुधार और वह भी केवल उच्च जाति के संदर्भ में थे, इसे ध्यान में रखना आवश्यक है।

भारत में इन समाज सुधारकों के सुधारों के कारण बहुत बड़ा सामाजिक परिवर्तन होना सम्भव नहीं था। उनके ये सुधार सामाजिक परिवर्तन के थे, ऐसा कहना उचित नहीं होगा। देश की सर्वसामान्य जनता के शोषण का मूल कारण अज्ञानता है, इसे जोतिराव ने पहचान लिया था। इसीलिए उन्होंने शूद्र, अतिशूद्र तथा नारियों की शिक्षा पर विशेष बल दिया था। शिक्षा पहले उच्च वर्ग को दी जाए तो वह बहते हुए, नीचे के वर्गो तक जाएगी इस बात का उन्होंने जोरदार विरोध किया था। लेकिन भारतीय सामाजिक सुधारों के जनक माने जानेवाले राजा राममोहन राय ने कनिष्ठ जाति के लोगों को शिक्षा देने का विरोध किया था। उन्होंने उच्च वर्ग के लोगों को ही शिक्षा देनी चाहिए, ऐसे अपने स्पष्ट विचार प्रस्तुत किये थे। महात्मा गांधी भी उच्च जाति के लोगों को ही शिक्षा देने के पक्षकर थे। इस राजा राममोहन राय के समान समाजसुधारकों की सामाजिक सुधार के संदर्भ में कौन भूमिका थी, यह स्पष्ट होता है। भारतीय समाज जिस जाति–व्यवस्था पर आधारित है उसके बदलने का समाज सुधारकों ने कभी भी प्रयत्न नहीं किया। बल्कि यदि किसी ने परिवर्तन करने की कोशिश की भी, तो उसका उन्होंने बहुत विरोध किया।

महाराष्ट्र के सामाजिक तथा धार्मिक सुधारों के पुरस्कर्त्ता समाज सुधारक न्यायमूर्ति महादेव गोंविद रानडे ने जीवन में अन्तिम समय तक सुधारों का समर्थन किया। लेकिन जब प्रत्यक्ष अनुकुल सुधार लाने का मौका मिला तो उन्होंने इसका विरोध किया। यह घटना फूले के सत्यशोधक समाज के संदर्भ में है। धर्म द्वारा ब्राह्मणों को दिए हुए श्रेष्ठत्व के अधिकार को जोतिराव फूले ने मानने से इन्कार कर दिया था। उन्होंने ब्राह्मणों की पुराहितशाही का कड़ा विरोध किया था। सत्यशोधक समाज ने भट–ब्राह्मणों द्वारा विवाह कराने की परम्परा का विरोध किया था। सत्यशोधक समाज ने अनेक स्थानों पर ब्राह्मणों के बिना शादियाँ करवाई। 1884 में ओतूर गाँव के साली, माली तथा तेली समाज के लोगों ने सत्यशोधक पद्धति से शादियां रचाई। दुल्हा–दुल्हन ने आपस में एक दूसरे को पुष्पमाला पहनाकर विवाह करने की सीधी–साधी पद्धति का विवरण किया। विवाह में भटजी का कोई काम नहीं, भट्–ब्राह्मणों की धार्मिक गुलामगिरी का नकारना मात्र ही उनका उद्देश्य था। धार्मिक गुलामी को जड़ से उखाड़ फेंकने

का यह कार्य गांव–गांव तक जा फैला। ब्राह्मणों को डर लगने लगा कि कहीं उनका धार्मिक वर्चस्व समाप्त न हो जाए। इसलिए वे लोग न्यायालय चले गए।

शादी लगाने के लिए ब्राह्मण को नहीं बुलाया गया तो शादी में धार्मिक विधि न करने के लिए उन लोगों को सचेत करना। उन विधि को यदि कोई और करता है तो उसके नुकसान की भरपाई ब्राह्मणों को मिलनी चाहिए। इसीलिए ब्राह्मणों ने न्यायलय में अपील दाखिल की थी। उस समय न्यायालय में न्यायमूर्ति रानडे थे, इनके पास ही यह केस गया। इस केस का फैसला सत्यशोधक समाज के पक्ष में लगेगा। ऐसा सुधारवादियों का मत था। क्योंकि रानडे स्वयं समाज सुधारक थे। लेकिन रानडे ने जैसे स्वयं के विवाह के समय सुधारवादी विचारों को ताक पर रखकर नाबालिग लड़की से विवाह किया था, उसी प्रकार इस मामले में भी रानडे ने अपने सुधारवादी विचारों को ताक पर रखकर अपना सच्चा रूप दिखाते हुए ब्राह्मणों के पक्ष में फैसला सुनाया। पारम्परिक अधिकारो को भंग करने के लिए नुकसान की भरपाई/मांगने के भट–ब्राह्मणों को अधिकार को तो उन्होंने स्वीकार किया ही, इसके अलावा आनुवांशिक ब्राह्मण उपाध्याय के बिना अन्य किसी भी धार्मिक विधि न करने की सलाह देनेवाले आदेश भी निकाला था। इस समय रानडे के भीतर सुधारक हार गया था और उनके ब्राह्मण श्रेष्ठत्व का अहंकार विजयी हुआ। धार्मिक बातों को न्याय दिलाने वालों के लिए प्रचलित कानून में कोर्ल कलम नहीं थी। इस बात को ध्यान में रखकर यदि रानडे समय की गम्भीरता को ध्यान में रखते हुए, मद्रास हाईकोर्ट के ब्राह्मण न्यायधीश समानख पुरोहिताई के अधिकार को कोर्ट नहीं मानेगा, इस प्रकार के अधिकार को मान्यता देना सार्वजनिक सिद्धांतों के विरुद्ध हैं, ऐसा फैसला दिया जाता है तो ब्राह्मणवाद की धार्मिक गुलामी पर प्रतिबन्ध लग सकता था। उससे सामाजिक सुधार के कार्य को गति मिल गई होती और धार्मिक गुलामी नष्ट करनेवाले जोतिराव फूले के सत्यशोधक समाज के परिवर्तन कार्य को प्रोत्साहन मिल गया होता।

सामाजिक सुधारकों के विचार चाहे कितने भी उच्च कोटि के हो, लेकिन उनका व्यवहार सामाजिक सुधारों के विरुद्ध ही था। वे केवल बोलने वाले समाजसुधारक ही थे। लेकिन उनका प्रत्यक्ष आचरण उनके विरोध में था। भारतीय समाजसुधारक में मुख्य रूप से उच्च जाति के लोग ही थे। समाज में आमूल–चूल परिवर्तन होना चाहिए, ऐसा उन्हें कभी नहीं लगा। केवल कुछ अनिष्ठ रूढ़ी, परंपरा में परिवर्तन होना चाहिए, केवल इतना ही उनका सुधार के बारे में विचार था। जिसके कारण समाज में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ।

निष्कर्ष

देश के समाज सुधारक तथा जोतिराव फूले के सामाजिक परिवर्तन के कार्यों की तुलनात्क अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि फूले की सामाजिक परिवर्तन की संकल्पना समाजसुधारकों के परिवर्तन की संकल्पना से बिलकुल अलग थी। फूले सम्पूर्ण समाज–व्यवस्था में परिवर्तन चाहते थे। समाज में बुनियादी परिवर्तन लाने के लिए उन्होने वैसे विचार समाज के सामने प्रस्तुत किए और उसके अनुसार प्रत्यक्ष रूप से कार्य भी किया। देश के सभी समाज सुधारकों के कारण जो परिवर्तन नहीं हो सका, उसकी अपेक्षा बहुत बड़ा परिवर्तन अकेले फूले के विचार तथा कार्यो के कारण हुआ है। क्योंकि जोतीराव फूले के विचार अन्य समाज सुधारकों के विचारों तथा कार्यों से बहुत आगे थे।

संदर्भ ग्रन्थों की सूची :–

1. डी.के. शरन, सेडुल्ड कास्ट, (थेसिस), पृ. 139
2. वही, पृ. 140
3. अजय नवरिया, ज्योतिबा फूले के सामाजिक विचार, कृष्णा नगर, दिल्ली, 2004, पृ. 16
4. वही, पृ. 17
5. वही, पृ. 18
6. डॉ. धर्मवीर, दलित समाज के नये साईबाबा, ज्योतिबाफूले, इगल पैलेस, मेडिकल चौक, नागपुर, 1998, पृ. 6–15, 44
7. नरेन्द्र शेखर, दलित साहित्य (सं.) जय प्रकाश कर्टय, लोनी रोड, दिल्ली, पृ. 99
8. वही, पृ. 100
9. शैलेन्द्र कुमार त्रिपाठी, दलित चिन्तन बनाम इतिहास, दिल्ली, 1998, पृ. 68

RRIJM 2015, All Rights Reserved